इकबाल

विकलांगता की रूढ़ छवि का नकार

टेरेसा थाराकन

छोटे बजट की फिल्म 'इकबाल' ने बॉलीवुड फिल्म उद्योग के फार्मूले को उलट कर समीक्षकों और दर्शकों को सोचने के लिए मजबूर कर दिया है। इस फिल्म में न कोई नाच है, न तड़क-भड़क, न नामी-गिरामी सितारे और सबसे बड़ी बात तो यह कि इसमें रोमांस भी नहीं है! इस फिल्म की चर्चा तब बढ़ी जब प्रसिद्ध कलाकार मकबूल फिदा हुसैन ने इस से प्रेरित अपनी चार पेटिंगें बेचीं और जाने-माने क्रिकेट खिलाड़ी कपिल देव ने इसमें अभिनय किया।

'इकबाल' एक ग्रामीण लड़के की कहानी है जो राष्ट्रीय स्तर का क्रिकेट स्टार बनने का सपना देखता है और उसे पूरा करने के लिए मुसीबतों से जूझता है। फिल्म में एक ऐसे महत्वाकांक्षी किशोर को हीरो के रूप में बड़ी कुशलता से पेश किया गया है जो संयोग से मूक और बधिर है। इसके विपरीत 'ब्लैक' फिल्म में विकलांगता से उपजी समस्याओं से लड़ती एक बधिर व नेत्रहीन लड़की की कहानी में सहानुभूति दर्शाई गई थी। 'इकबाल' के निर्देशक नागेश कुकुनूर का कहना है कि उनका लक्ष्य था कि दर्शक पांच मिनट के भीतर भूल जाएं कि नायक विकलांग है। और, इसमें वे सफल हुए हैं। सपने देखने वाला वह किशोर जब पिता की आपत्तियों, पैसे की कमी, प्रतिद्वंद्विता, उपहास, अपने बेकाबू क्रोध, चयन प्रक्रिया की राजनीति और नशे में धुत्त बेईमान प्रशिक्षक का सामना करता है तो इस बात का कोई मतलब ही नहीं रह जाता कि श्रेयस तळपदे जिस किशोर की मुख्य भूमिका निभा रहा है वह सुन या बोल नहीं सकता। किसी विकलांग के जीवन की मुख्य धारा से न जुड़ सकने की परंपरागत घिसीपिटी भूमिका को यह संवेदनशीलता नकारती है। इकबाल की ''सीमाओं'' पर पिता के आए दिन के कड़वे उलाहनों और उस किशोर के प्रति मां के गर्व तथा अटूट विश्वास, साथ ही संकेतों की भाषा में उसके लिए दुभाषिए का काम करने और मदद देने वाली छोटी बहिन के विरोधाभास को बड़े प्रभावशाली ढंग से दिखाया गया है।

इकबाल की विकलांगता मात्र एक दृश्य से ही दर्शक को झकझोर देती है- जब उसे क्रिकेट अकादमी से निकाल दिया जाता है और वह रात में भूसे के ढेर में छिप जाता है। वहां, क्रिकेट खिलाड़ियों के फोटोग्राफों से घिरा, अपने ही सन्नाटे में डूबा, किसी से भी अपना क्रोध व्यक्त न कर सकने की कशमकश के बीच वह बेआवाज जार-जार रोता है।

लेकिन वह किशोर जीवित रहने और अपने सपनों को साकार करने के लिए मजबूती से मुकाबला करने का सबक सीख चुका है। अपने लक्ष्य को पाने के क्रम में वह अपने प्रशिक्षक को भी व्यावहारिक सबक सिखाता है। यह भूमिका नसीरुद्दीन शाह ने निभाई है जो अपनी पांचों ज्ञानेन्द्रियों तथा भरपूर प्रतिभा के बावजूद खेल की राजनीति और उठा-पटक का सामना करने में असमर्थ होने के कारण विकलांग हो गया है।

फिल्म कुछ अन्य अछूते पहलुओं को भी छूती है। इकबाल की बहिन को अनपढ़ और जल्दी ब्याहे जाने की नियति को ढोती दब्बू घरेलू लड़की के बजाय एक आत्मविश्वास से भरी, दो टूक बोलने वाली लड़की के रूप में दिखाया गया है जो अपने भाई के संघर्ष में उसका साथ देती है।

यह फिल्म नई सोच और मुख्यधारा के सिनेमा का सफल मिश्रण है। नसीरूद्दीन शाह और गिरीश कर्नाड जो क्रिकेट अकादमी के एक दुष्ट प्रशिक्षक की भूमिका निभाते हैं, फिल्म की कहानी में जान डालते हैं जिसके कारण बंबइया फिल्मों के दर्शक इस फिल्म के नए मुख्य कलाकारों को भी स्वीकार कर लेते हैं। फिल्म सुभाष घई की 'मुक्ता सर्चलाइट फिल्म्स' की ओर से रिलीज की गई है जिसे छोटे बजट तथा आर्ट फिल्मों को ध्यान में रख कर बनाया गया है। इस कारण इसे पहले से स्थापित मार्केटिंग तंत्र का लाभ मिलना चाहिए। इस फिल्म को क्षेत्रीय भाषाओं में डब करने पर भी विचार किया जा रहा है। 'इकबाल' जैसी सीधीसादी फिल्म और इसकी सफलता विशाल बॉलीवुड फिल्म उद्योग के लिए एक नई सकारात्मक प्रवृत्ति की ओर संकेत करती है। □

© Mukta Searchlight Films

सबसे ऊपर: भूसे के ढेर में अपने सपनों और क्रिकेट के नायकों की तस्वीरों के बीच इकबाल।

ऊपर: वरिष्ठ अभिनेता नसीरुद्दीन शाह से गेंदबाजी का सबक लेता इकबाल यानि श्रेयस तळपदे।

लेखिका: *टेरेसा थाराकन मुंबई में संपादक तथा स्वतंत्र लेखिका हैं।*